RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452 Raaso
Refreed Journal

रासो

अन्तर्विषयी त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-16, अंक-3, जून जुलाई अगस्त 2023

RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452Raaso
Refreed Journal

रास्तो

इतिहास, संस्कृति, साहित्य एवं दर्शन की त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-16 अंक - 3 जून-जुलाई-अगस्त-2023

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

निदेशक
कॉम्पिटिशन प्लस संस्थान, ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन्स, अजमेर (राजस्थान)

संरक्षक

* **प्रो. जे. पी. शर्मा** - पूर्व कुलपति, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

सलाहकार मण्डल

* **प्रो. विभा उपाध्याय** - प्रोफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
* **नर्मदा प्रसाद उपाध्याय** - प्रसिद्ध साहित्यकार तथा संस्कृति चिंतक, इन्दौर (मध्य प्रदेश)
* **प्रो. टी.के. माथुर** - पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर (राज.)
* **डॉ. रमेश अग्रवाल** - पूर्व स्थानीय सम्पादक, दैनिक भास्कर, अजमेर (राजस्थान)
* **डॉ. गौरव बिस्सा** - सहआचार्य, विभागाध्यक्ष, प्रबंधा अध्ययन विभाग, राजकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
* **डॉ. बीना शर्मा** - पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सावित्री कन्या महाविद्यालय, अजमेर
* **प्रो. शोभा आर. मिश्रा** - आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, माधव महाविद्यालय, उज्जैन
* **डॉ. वेद प्रकाश विद्यार्थी** - पूर्व सहायक निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली।

☆ उप सम्पादक
डॉ. रीता पारीक
प्राचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ प्रबन्ध सम्पादक
डॉ. मृत्युंजय शर्मा
सह-आचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ सहायक सम्पादक
डॉ. निष्काम शर्मा

☆ शब्द संयोजन
मुकेश कुमार माहेश्वरी

☆ सम्पादकीय/सचिव
व्यवस्थापकीय कार्यालय
सृजन संस्थान,
आचमन, वेद विहार,
लोहाखान, अजमेर-06
दूरभाष : 0145-2426610
e-mail : rasoajmjournal@gmail.com

☆ प्रकाशक :
पुष्पा शर्मा
सृजन संस्थान,
द्वारा आचमन पब्लिकेशन्स,
अजमेर

☆ मुद्रक :
मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स,
केसरगंज, अजमेर

☆ कम्प्यूटराइज्ड सेटिंग :
श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स
132, पंचवटी कॉलोनी,
अजमेर दूरभाष : 0145-2442701

सहयोग दर

* वार्षिक सदस्यता - 500 रु. (चार अंक) संस्थाओं हेतु - 600 रु. (चार अंक)
कृपया चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर श्रीमती पुष्पा शर्मा, प्रकाशक, आचमन पब्लिकेशन्स, अजमेर- 305006 के नाम भेजें।

प्रकाशक-श्रीमती पुष्पा शर्मा, 51/1509, वेद विहार, लोहाखान, अजमेर द्वारा मैसर्स सृजन संस्थान, अजमेर की ओर से प्रकाशित एवं मुद्रक-श्रीमती उषा गर्ग द्वारा मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स, केसरगंज, अजमेर से मुद्रित।

भारतीय ज्ञान परम्परा में उपनिषदों के संदर्भ में अर्थ तत्त्व मीमांसा

भावना जैन

सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)

हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

भारतीय ज्ञान-परम्परा में उपनिषदों का स्थान केवल दार्शनिक ग्रन्थों के रूप में नहीं, बल्कि गहन अर्थ-तत्त्व और आचार-तत्त्व की मीमांसा करने वाली जीवनोपयोगी विद्या के रूप में है। उपनिषदों में अर्थतत्त्व-मीमांसा का मूल उद्देश्य मानव को कर्मबन्धन और अविद्या से मुक्त कर ज्ञान, विवेक और मोक्ष की ओर अग्रसर करना है। इसी दृष्टि से 'उपनिषद्' शब्द की व्युत्पत्ति और उसके निहितार्थों को समझना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है।

'उपनिषद्' शब्द 'उप' और 'नि' उपसर्गों के साथ 'सद्' धातु से निष्पन्न माना गया है। पाणिनीय परम्परा, शांकर भाष्य तथा धातुवृत्तियों में 'सद्' धातु के अनेक अर्थ बताए गए हैं। इन अर्थों के आलोक में उपनिषद् शब्द केवल एक शाब्दिक संज्ञा नहीं रह जाता, बल्कि एक गहन दार्शनिक अवधारणा का प्रतिनिधित्व करता है।

'सद्' धातु का प्रथम अर्थ 'विशरण' या 'विनाश' है। अर्थात् वह क्रिया जिससे किसी वस्तु का क्षय या नाश होता है। उपनिषदों के सन्दर्भ में यह अर्थ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि उपनिषद् अविद्या, अज्ञान और कर्मबन्धन के विनाश का साधन माने गए हैं। शास्त्रों में कहा गया है कि संसार समग्र रूप से अवश होकर अज्ञान में डूबा हुआ है, और उपनिषद् उस अज्ञान के विनाश द्वारा सत्यज्ञान की प्राप्ति कराते हैं। इस दृष्टि से उपनिषद् विनाशात्मक नहीं, बल्कि अज्ञान-नाश के माध्यम से कल्याणकारी हैं।

'सद्' धातु का दूसरा अर्थ 'गति' है, जिसमें ज्ञान, गमन और प्राप्ति तीनों भाव निहित हैं। इस अर्थ के अनुसार उपनिषद् वह साधन हैं जिनके द्वारा साधक ज्ञान की ओर गमन करता है और अन्ततः परम सत्य की प्राप्ति करता है। यहाँ 'गति' केवल भौतिक चलना नहीं है, बल्कि चित्त और बुद्धि की वह आन्तरिक यात्रा है जो अज्ञान से ज्ञान की ओर, असत्य से सत्य की ओर और बन्धन से मुक्ति की ओर ले जाती है। उपनिषद् इसी ज्ञान-गति का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

'सद्' धातु का तीसरा अर्थ 'अवसादन' है, जिसका अभिप्राय पतन, शैथिल्य, दुःख अथवा समाप्ति से है। गीता के उदाहरण में जिस प्रकार शरीर और मन के शैथिल्य का वर्णन आता है, उसी प्रकार उपनिषद् संसारजन्य दुःख, क्लेश और मानसिक पतन की समाप्ति का उपाय प्रस्तुत करते हैं। उपनिषद् मनुष्य को उस अवस्था से बाहर निकालते हैं जहाँ वह दुःख, भय और मोह से ग्रस्त होता है।

शोध-पत्र में उल्लिखित सन्दर्भ एवं विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है, सम्पादक नहीं।

माधवीया धातुवृत्ति में 'सद्' धातु के इन तीनों अर्थों—विशरण, गति और अवसादन—का उल्लेख मिलता है। इन अर्थों के समन्वय से यह स्पष्ट होता है कि उपनिषद् वह ज्ञान हैं जो अज्ञान का विनाश करते हैं, सत्य की ओर गति प्रदान करते हैं और संसारजन्य दु:खों का अवसादन अर्थात् शमन करते हैं। इसी कारण उपनिषदों को केवल सैद्धान्तिक ग्रन्थ न मानकर मोक्ष-साधना का प्रत्यक्ष साधन माना गया है।

'नि' उपसर्ग के योग से 'सद्' धातु का अर्थ 'बैठना' भी हो जाता है। 'उप' उपसर्ग के साथ यह अर्थ 'निकट बैठना' बन जाता है। इस प्रकार 'उप-नि-सद्' का व्युत्पत्तिपरक अर्थ है—गुरु के समीप बैठना। यह बैठना केवल शारीरिक निकटता का बोधक नहीं है, बल्कि श्रद्धा, विनय और सेवा-भाव से युक्त होकर गुरु के सान्निध्य में रहकर शिक्षा ग्रहण करने की प्रक्रिया का संकेत करता है। महाभाष्य और अन्य व्याकरणिक ग्रन्थों में यह भाव भी मिलता है कि गुरु को मानकर उनकी सेवा करते हुए ज्ञान प्राप्त करना ही उपनिषद् की मूल भावना है।

कालक्रम में 'उपनिषद्' शब्द का अर्थ और भी सूक्ष्म होता गया। इसका आशय उस गोपनीय और रहस्यात्मक ज्ञान से होने लगा जो केवल योग्य शिष्य को गुरु द्वारा प्रदान किया जाता है। यह वह ज्ञान है जो सामान्य बौद्धिक अध्ययन से नहीं, बल्कि प्रत्यक्ष अनुभूति और आत्मबोध से प्राप्त होता है। उपनिषदों की शिक्षा ऐसी है जिससे श्रम, क्लेश और अज्ञान का उच्छेदन होकर साधक को सत्य की प्रतीति होती है।

यास्काचार्य की निरुक्त-परम्परा में 'उपनिषद्' शब्द की व्याख्या और भी अधिक गहन तथा तात्त्विक रूप में सामने आती है। यास्क के अनुसार 'नि' और 'उप' दोनों उपसर्ग केवल निकटता या बैठने का बोध नहीं कराते, बल्कि वे 'विनिग्रह' के अर्थ में भी प्रयुक्त होते हैं। निरुक्त में स्पष्ट कहा गया है— 'नि अव इति विनिग्रहार्थीय:' अर्थात् 'नि' उपसर्ग विनिग्रह के अर्थ का द्योतक है। विनिग्रह का तात्पर्य है नियन्त्रण, दमन अथवा किसी वस्तु पर पूर्ण आधिपत्य, जिससे वह पूर्णत: वश में आ जाए। यह अर्थ उपनिषदों की दार्शनिक भावना से पूर्णत: संगत है, क्योंकि उपनिषदों का मुख्य लक्ष्य इन्द्रियों, मन और बुद्धि को संयमित करके आत्मतत्त्व की अनुभूति कराना है।

इसी प्रकार यास्क 'उप' उपसर्ग का अर्थ 'समीप' अथवा 'अधिक' मानते हैं— 'उप इत्युपजनम्'। यहाँ 'उप' केवल भौतिक समीपता का द्योतक नहीं है, बल्कि गुरु के समीप श्रद्धा, विनय और साधना-भाव से उपस्थित होने का संकेत देता है। 'अधिक' का अर्थ यह भी है कि यह विद्या सामान्य ज्ञान से ऊपर उठकर परम-तत्त्व के गूढ़ रहस्यों तक पहुँचाती है। इस प्रकार 'नि' के विनिग्रह और 'उप' के समीपता अथवा उत्कर्ष के अर्थ मिलकर उपनिषद् को ऐसी विद्या सिद्ध करते हैं जो साधक के आन्तरिक जीवन पर नियन्त्रण स्थापित कर उसे उच्चतम सत्य के समीप ले जाती है।

इन निरुक्तियों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि ब्रह्म-विद्या की प्राप्ति के लिए गुरु के पास बैठकर जिन विशिष्ट ग्रन्थों का अध्ययन किया जाता था, वे ही 'उपनिषद्' कहलाए। ऑप्टे के संस्कृत-हिन्दी कोश में उद्धृत श्लोक 'उपनीय तस्मात्मानं ब्रह्मापास्तद्वयं यत: निहन्त्यविद्यां तज्जं च तस्मादुपनिषद् भवेत्' इस तथ्य को और पुष्ट करता है। इसका आशय यह है कि जो विद्या आत्मा को ब्रह्म के समीप ले जाकर द्वैत का निवारण करती है और उससे उत्पन्न अविद्या का नाश करती है, वही 'उपनिषद्' है। यहाँ उपनिषद् को प्रत्यक्ष रूप से अविद्या-विनाशिनी ब्रह्मविद्या कहा गया है।

उपनिषद् को 'विद्या' के अर्थ में समझने पर इसका साधक-सापेक्ष स्वरूप सामने आता है। उपनिषद् उन मुमुक्षुओं के लिए है जो दृष्ट और श्रुत—अर्थात् प्रत्यक्ष और श्रवणजन्य—सभी ऐन्द्रिय विषयों से विरक्त होकर मुक्ति की कामना से गुरु के समीप जाते हैं और श्रद्धा के साथ साधना करते हैं। अथर्ववेद के मन्त्र के अनुसार इस उपनिषद्-विद्या से उनकी अविद्या का नाश सम्भव है। इसलिए उपनिषद् को ऐसी विद्या माना गया है जो परम-तत्त्व के रहस्यों को उद्घाटित करती है और अज्ञान का उच्छेदन करती है। इस व्युत्पत्ति के अनुसार आत्मा और ब्रह्म के अभेद का निश्चय कराने वाली यह निश्चयात्मिक विद्या ही 'उपनिषद्' है, जैसा कि ईशोपनिषद् की 'मणि-प्रभा' टीका की भूमिका में भी स्वीकार किया गया है।

उपनिषद् का एक अन्य महत्त्वपूर्ण अर्थ 'रहस्य' के रूप में भी विकसित हुआ। वैदिक काल में ब्रह्म का सूक्ष्म और गूढ़ ज्ञान सार्वजनिक उपदेश के रूप में नहीं दिया जाता था, बल्कि योग्य शिष्य को गुरु के समीप बैठाकर ही प्रदान किया जाता था। इसी कारण 'उपनिषद्' शब्द रहस्यमय या गुह्य ज्ञान के लिए प्रयुक्त होने लगा। केनोपनिषद् और छान्दोग्योपनिषद् में आए हुए 'गुह्यादेश' जैसे पद इस रहस्यात्मक स्वरूप की पुष्टि करते हैं। अमरकोश भी 'उपनिषद्' शब्द को गूढ़ धर्म और रहस्य के अर्थ में स्वीकार करता है।

उपनिषदों को वेदान्त के रूप में समझना भारतीय दर्शन की केन्द्रीय धारा को समझने के समान है। उपनिषद् प्राय: वेदों के अन्तिम भाग माने जाते हैं, केवल ग्रन्थ-संरचना की दृष्टि से ही नहीं, बल्कि वैचारिक और दार्शनिक परिपक्वता की दृष्टि से भी। वेदों में जहाँ प्रारम्भ में कर्मकाण्ड, यज्ञ-विधान और लौकिक-पारलौकिक कामनाओं की पूर्ति का विधान मिलता है, वहीं उपनिषदों में उसी वैदिक चिन्तन की अन्तिम परिणति के रूप में आत्मा, ब्रह्म, जगत् और मोक्ष से सम्बन्धित सूक्ष्म प्रश्नों का विवेचन प्राप्त होता है। इसी कारण यह माना गया कि उपनिषदों में वेदों का अन्तिम सन्देश निहित है और वेदों के कार्य-क्षेत्र की चरम सीमा यहाँ आकर पूर्ण होती है।

इस तथ्य से यह स्पष्ट होता है कि उपनिषदों में वैदिक शिक्षाओं का सार संकलित है। वेदों का विस्तृत कर्मकाण्डात्मक, देवतावादी और प्रतीकात्मक स्वरूप यहाँ आकर तात्त्विक और दार्शनिक रूप धारण कर लेता है। इसी सारभूतता के कारण उपनिषदों को 'वेदान्त' की संज्ञा दी गई है। 'वेदान्त' का अर्थ केवल वेदों का अन्त नहीं है, बल्कि वेदों का लक्ष्य, निष्कर्ष और चरम सिद्धान्त भी है। भारतीय दर्शन में यह स्वीकार किया गया है कि रहस्यात्मक और परम तत्त्व से सम्बन्धित ज्ञान ही वास्तव में वेदान्त है। मुण्डकोपनिषद् में 'वेदान्त-विज्ञान' को सुनिश्चित अर्थ का बोध कराने वाला कहा गया है और श्वेताश्वतर उपनिषद् में वेदान्त को परम गुह्य विद्या के रूप में निरूपित किया गया है, जो प्राचीन काल से प्रबुद्ध पुरुषों द्वारा प्रतिपादित होती आई है। इससे स्पष्ट है कि वेदान्त वह विद्या है जो वेदों के गूढ़तम और सूक्ष्म अर्थों का उद्घाटन करती है।

इस दृष्टि से वेदान्त का ध्येय केवल शाब्दिक व्याख्या नहीं, बल्कि वेदों में निहित प्रतीकों, उपमाओं और कर्मविधानों के पीछे छिपे दार्शनिक सत्य को प्रकट करना है। आत्मा और ब्रह्म की एकता, अज्ञान और विद्या का भेद, बन्धन और मोक्ष का विवेचन—ये सभी वेदान्त के केन्द्रीय विषय हैं और उपनिषद् इन्हीं का सुस्पष्ट निरूपण करते हैं। अत: उपनिषद् और वेदान्त एक-दूसरे से पृथक नहीं, बल्कि अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं।

उपनिषदों का महत्त्व केवल दार्शनिक ग्रन्थों के रूप में नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति के दर्पण के

रूप में भी अत्यन्त व्यापक है। उपनिषद् हमारी संस्कृति के प्राण माने गए हैं, क्योंकि इनमें वैदिक संस्कृति की आत्मा प्रतिविम्बित होती है। भारतीय सभ्यता और साधना का सम्पूर्ण ढाँचा वैदिक ऋषियों द्वारा प्राप्त तत्त्वानुभूति पर आधारित है और उस तत्त्वानुभूति का सर्वाधिक परिष्कृत रूप उपनिषदों में दिखाई देता है। भारतीय साहित्य, दर्शन, धर्म और विज्ञान, यहाँ तक कि समाज-नीति और राजनीति की मूल चेतना भी उपनिषद्-ज्ञान से आलोकित प्रतीत होती है। सत्य, ऋत, धर्म, करुणा, आत्मसंयम और सार्वभौमिक एकता जैसे मूल्य उपनिषदों से ही हमारी संस्कृति में प्रवाहित हुए हैं।

इसी कारण भारतीय संस्कृति को 'आर्य-संस्कृति' कहा गया है, जिसका मूल अर्थ है—उन्नत, श्रेष्ठ और मूल्यनिष्ठ जीवन-पद्धति। उपनिषदों में वर्णित जीवन-दृष्टि ही उस आर्य-संस्कृति का आधार है। हमें अपनी 'विश्ववारा' अर्थात् संसार की प्रथम और प्राचीनतम संस्कृति का समृद्धतम रूप इन्हीं उपनिषदों में प्राप्त होता है। यजुर्वेद के मन्त्र में उल्लिखित 'प्रथमा संस्कृति' का भाव भी इसी ओर संकेत करता है कि भारत की सांस्कृतिक चेतना आदिकाल से ही उच्चतम आध्यात्मिक मूल्यों पर आधारित रही है।

सांस्कृतिक दृष्टि से उपनिषद्-साहित्य का महत्त्व इसीलिए निर्विवाद माना गया है। इनकी गूढ़ता, सार्वभौमिकता और मानवमात्र के लिए कल्याणकारी दृष्टि ने इन्हें केवल भारत तक सीमित नहीं रखा। उनकी लोकप्रियता के कारण उनका प्रचार-प्रसार विदेशों में भी हुआ और भारत ने उपनिषद्-ज्ञान के माध्यम से विश्व में अपना बौद्धिक वर्चस्व स्थापित किया। यह ज्ञान भारत की वह अमूल्य देन है जिसने विश्वचिन्तन को गहराई से प्रभावित किया।

पाश्चात्य दार्शनिक शोपेनहॉवर ने उपनिषदों को जीवन की सांत्वना और शान्ति का स्रोत कहा, डायसन जैसे वैज्ञानिक-चिन्तक उनसे प्रेरित हुए, अरबी इतिहासकार अलबेरूनी ने भारतीय ज्ञान-परम्परा की गहनता को स्वीकार किया और भारत में दाराशिकोह ने उपनिषदों का फारसी अनुवाद कराकर उन्हें विश्व के सामने प्रस्तुत किया। आगे चलकर मैक्समूलर, मैकडॉनल और अन्य प्रतिष्ठित विद्वानों ने उपनिषदों की मुक्तकंठ से प्रशंसा की और उन्हें मानवता के लिए अक्षय शान्ति और ज्ञान का स्रोत माना।

प्रो. जे. एस. मैकेंजी ने 'विश्व-कोश' में उपनिषदों के दार्शनिक महत्त्व को रेखांकित करते हुए यह प्रतिपादित किया है कि उपनिषदों में जो तत्त्व-विवेचन हमारे सामने प्रस्तुत किया गया है, वह विश्व-निर्माण सम्बन्धी सिद्धान्त का मानव-इतिहास में सबसे प्रारम्भिक और मौलिक प्रयास माना जा सकता है। उनके अनुसार उपनिषदों में सृष्टि की उत्पत्ति, उसकी संरचना और उसके अन्तर्निहित नियमों पर जो चिन्तन मिलता है, वह केवल धार्मिक आस्था या कल्पना पर आधारित नहीं है, बल्कि गहन दार्शनिक जिज्ञासा और तर्कसम्मत दृष्टि का परिणाम है।

मैकेंजी यह भी स्वीकार करते हैं कि उपनिषदों का यह सृष्टि-विचार अत्यन्त रोचक होने के साथ-साथ बौद्धिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें विश्व को किसी बाह्य यांत्रिक कारण से उत्पन्न मानने के स्थान पर एक मूल तत्त्व—ब्रह्म—से अभिव्यक्त होने वाली सत्ता के रूप में देखा गया है। उपनिषदों में यह प्रश्न केन्द्रीय रूप से उठाया गया है कि यह जगत् कहाँ से उत्पन्न हुआ, किसमें स्थित है और अन्ततः किसमें लीन हो जाता है। इस प्रकार सृष्टि-मीमांसा को अस्तित्व-मीमांसा और तत्त्व-मीमांसा से जोड़कर देखा गया है।

उनके मतानुसार उपनिषदों की यह विशेषता है कि वे विश्व-निर्माण की समस्या को केवल बाह्य प्रकृति के स्तर पर नहीं सुलझाते, बल्कि उसे मानव-चेतना और आत्मानुभूति से जोड़ देते हैं। ब्रह्म और आत्मा के अभेद का सिद्धान्त यह संकेत देता है कि जिस तत्त्व से विश्व की उत्पत्ति हुई है, वही तत्त्व मनुष्य के भीतर भी निहित है। इस कारण उपनिषदों का सृष्टि-सिद्धान्त केवल ब्रह्माण्ड-विज्ञान नहीं रह जाता, बल्कि आत्म-ज्ञान की प्रक्रिया भी बन जाता है।

इसी व्यापक और गहन दृष्टिकोण के कारण मैकेंजी उपनिषदों को विश्व-चिन्तन के इतिहास में एक अद्वितीय उपलब्धि मानते हैं। उनके अनुसार उपनिषदों में प्रस्तुत यह प्रारम्भिक विश्व-निर्माण सिद्धान्त न केवल प्राचीन भारतीय मनीषा की सृजनात्मकता का प्रमाण है, बल्कि यह भी दर्शाता है कि मानव-बुद्धि ने बहुत आरम्भिक काल में ही सृष्टि और अस्तित्व के मूल प्रश्नों पर गम्भीरता से विचार करना प्रारम्भ कर दिया था। यही कारण है कि उपनिषदों का यह दार्शनिक प्रयत्न आज भी आकर्षक, प्रेरक और महत्त्वपूर्ण बना हुआ है।

निष्कर्षत: उपनिषद वेदों का तात्त्विक सार और ब्रह्मविद्या का सर्वोच्च रूप हैं। ये गुरु-शिष्य परम्परा में प्राप्त होने वाली ऐसी विद्या हैं जो इन्द्रिय-विनिग्रह द्वारा अविद्या का नाश कर आत्मा-ब्रह्म के अभेद का बोध कराती है। वेदान्त के रूप में उपनिषद् कर्मकाण्ड से ऊपर उठकर परम तत्त्व का रहस्य प्रकट करते हैं और भारतीय संस्कृति, दर्शन तथा सभ्यता की आत्मा के रूप में प्रतिष्ठित हैं। यही कारण है कि उपनिषदों को विश्व-चिन्तन के इतिहास में एक प्राचीन, मौलिक और महत्त्वपूर्ण दार्शनिक उपलब्धि माना गया है।

ꕥꕥꕥ

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *डॉ. राधाकृष्णन, भारतीय दर्शन, भाग-1, हिन्दी अनुवाद, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, संस्करण 2011*
2. *मुण्डकोपनिषद् 3/2/6, उपनिषद् संग्रह, गीता प्रेस, गोरखपुर*
3. *श्वेताश्वतर उपनिषद् 6/22, उपनिषद् संग्रह, गीता प्रेस, गोरखपुर*
4. *प्रो. जे. एस. मैकेंजी, विश्व-कोश (Encyclopaedia of Philosophy)*
5. *गीता प्रेस, उपनिषद् अंक, गोरखपुर, वर्ष 23*
6. *यजुर्वेद 7/14, दयानन्द सरस्वती भाष्य सहित, वेद भाष्य, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली*
7. *आप्टे, वी. एस., संस्कृत-हिन्दी कोश, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, पुनर्मुद्रित संस्करण*
8. *अमरदास, ईशोपनिषद् की मणि-प्रभा टीका (भूमिका), चौखम्बा संस्कृत संस्थान, वाराणसी*
9. *केनोपनिषद् 4/7 तथा छान्दोग्योपनिषद् 3/5/2, उपनिषद् संग्रह, गीता प्रेस, गोरखपुर*
10. *यास्काचार्य, निरुक्त, अध्याय 1/2, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी*